३० मार्च, २०१६

Indian Council of World Affairs
Sapru House, Barakhamba Road
New Delhi

विशेष रिपोर्ट

UNASUR

डॉ. स्तुति बनर्जी और सुश्री अपराजिता पांडेय*

परिचय

वैश्वीकरण ने दुनियाभर के पुरुषों और महिलाओं के रोजमर्रे की ज़िंदगी बदल दी है। वैश्वीकरण कोई नई बात नहीं, लेकिन पिछले कुछ दशकों में तकनीकि क्रान्ति ने सामाजिक, सांस्कृतिक, राजनीतिक और ख़ासकर आर्थिक स्तर पर वैश्विक बदलाव लाने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई है। वैश्वीकरण के साथ और ख़ासकर शीतयुद्ध के बाद अंतरराष्ट्रीय स्तर पर अर्थव्यवस्था का तालमेल तेजी से बढ़ा। अंतरराष्ट्रीय चुनौतियों को देखते हुए क्षेत्रीयता का महत्त्व भी बढ़ने लगा। क्षेत्रीयता और अंतरराष्ट्रीयता – दोनों ने सामंजस्य के कई स्तरों पर एक-दूसरे को प्रभावित किया है। पहले क्षेत्रीयता का दायरा सिर्फ सुरक्षा और आर्थिक स्तर तक सीमित था, लेकिन नई व्यवस्था में क्षेत्रीयता ने सामाजिक ज़रूरतों के विभिन्न पहलुओं को अपने दायरे में समेट लिया। अब क्षेत्रीयता सिर्फ व्यापार तक ही सीमित नहीं, बल्कि वित्तीय नीतियां, विकास की योजनाएं और दूसरे क्षेत्रों के अलावा यहां तक कि आम लोगों के ज़रूरत की वस्तुएं और पर्यावरण भी इसके विस्तृत दायरे का हिस्सा बन गए हैं। इस लिहाज से ये सिर्फ सरकारों के साथ सामन्जस्य का ही नहीं, बल्कि निजी क्षेत्र की कम्पनियों और सामाजिक गठबंधन का भी हिस्सा बन गया है।

अधिकतर देश एक या एकाधिक क्षेत्रीय फोरम का हिस्सा होते हैं, जिससे उन्हें क्षेत्रीय स्तर के मुद्दों को बेहतर तरीके से समझने और उनपर काम करने में आसानी होती है, क्षेत्रीय परियोजाओं के लिए जनमत हासिल होता है। इसके अलावा विकास के राह की चुनौतियों, आम लोगों की सुरक्षा और राष्ट्रीय सुरक्षा जैसे गंभीर मसलों पर कार्रवाई करने में भी आसानी होती है। साथ ही राजनीतिक, आर्थिक और सामरिक मुद्दों में बहुआयामी समझ पैदा होती है।

क्षेत्रीय सामंजस्य से विभिन्न स्तरों पर गहराई से विचार किया जा सकता है और इस विचार के कई स्वरूप हो सकते हैं – आपसी सहयोग के सामान्य समझौतों से लेकर देश के भीतर या विभिन्न देशों की सरकारों के बीच समझ बन सकती है। विस्तृत आर्थिक सामंजस्य सदस्य देशों को अपनी आर्थिक और राजनीतिक संस्थाओं को मजबूत करने में मदद देता है। सबसे महत्त्वपूर्ण है कि एक मजबूत क्षेत्र के रूप में संगठित होने के बाद ये दुनिया को भी विभिन्न क्षेत्रों में राह दिखाने में मददगार साबित होता है। 9/11 की आतंकवादी घटना के बाद क्षेत्रीय समूहों की लामबंदी शुरु हुई। नतीजा ये हुआ कि रूस, चीन, भारत और ब्राज़ील जैसी विकासशील क्षेत्रीय ताकतें कमजोर पड़ते अमेरिका के बाद उदीयमान होने लगीं। हालांकि ये सवाल अब भी बना हुआ है कि इन उदीयमान क्षेत्रीय ताकतों का अंतरराष्ट्रीय स्तर पर नवनिर्माण के अलावा अंतरराष्ट्रीय और पहले से स्थापित क्षेत्रीय व्यवस्था के रखरखाव में क्या रोल होगा और ये किस हद तक अंतरराष्ट्रीय राजनीति को प्रभावित कर पाएंगे।

ऐसे तमाम सवालों को ध्यान में रखते हुए यूनियन ऑफ साउथ अमेरिकन नेशंस या UNASUR का अध्ययन करने की कोशिश की गई है। इस आलेख का लक्ष्य इस संस्था की निपुणता और इसके सामने चुनौतियों का विश्लेषण करना है।

लैटिन अमेरिका में क्षेत्रीयता

जैसा पहले कहा जा चुका है कि क्षेत्रीयता की अवधारणा नई नहीं है। लिहाजा लैटिन अमेरिका के लिए भी ये कोई नई बात नहीं थी। इस क्षेत्र में आपसी समन्वय की बुनियाद 19वीं सदी के पहले उत्तरार्ध में यूरोपीय रजवाड़ों के ख़िलाफ़ आज़ादी के आंदोलन के दौरान तलाशी जा सकती है।

पश्चिमी गोलार्ध में क्षेत्रीयता की शुरुआत मुनरो सिद्धांत में तलाशी जा सकती है। 2 दिसम्बर 1823 को अमेरिकी कांग्रेस के सालाना सम्बोधन में राष्ट्रपति जेम्स मुनरो ने कहा था, "The American continents... are henceforth not to be considered as subjects for future colonisation by any European Powers." यानि अमेरिकी उपनिवेश... भविष्य में किसी यूरोपीय ताकत के उपनिवेश के रूप में नहीं देखे जाने चाहिए। इस सोच की बुनियाद सेन्ट्रल अमेरिका के हाथों अपनी ज़मीन गंवा चुके स्पेन के उन्हें वापस पाने की कोशिशों के परिणामस्वरूप देखी जा सकती है। अपने राज्य सचिव जॉन क्विंसी एडम्स की सलाह पर राष्ट्रपति जेम्स मुनरो ने कांग्रेस की सालाना बैठक में ये ऐलान किया था। हालांकि राष्ट्रपति जेम्स मुनरो का ये ऐलान फौरन सिद्धांत के रूप में परिवर्तित नहीं हो सका। अमेरिकी इतिहासकार डेक्सटर परकिंस के मुताबिक 1853 में पहली बार मुनरो की नीतियों को राजनीतिज्ञों और अखबारों ने सिद्धांत के रूप में मान्यता दी, जिसे मुनरो सिद्धांत की संज्ञा दी गई और जो भविष्य में इस क्षेत्र में अमेरिका की विदेश नीति का बुनियाद बना। इस सिद्धांत के मुताबिक पश्चिमी गोलार्ध में यूरोपीय ताकतों को दखलंदाजी नहीं करनी थी, जो दोनों महादेशों के सभी देशों पर लागू होता था। सिद्धांत में ये भी स्पष्ट था कि अमेरिका पूर्वी गोलार्ध के मामलों में दखलंदाजी नहीं करेगा। इस सिद्धांत के तीन मुख्य आयाम थे – अमेरिका और यूरोप को अपना प्रभावक्षेत्र अलग बनाना, उपनिवेशवाद को ख़त्म करना और दखलंदाजी से बचना – इस सिद्धांत ने नई दुनिया और यूरोप की पारम्परिक तानाशाही रवैये के बीच एक गहरी लकीर खींच दी। अमेरिका नई दुनिया में यूरोपीय उपनिवेशवाद के विरोध में था, लेकिन दक्षिणी हिस्सों को अपने प्रभावक्षेत्र में लाना और उसके साथ व्यापारिक रिश्ते बढ़ाने का इच्छुक था। यूरोपीय वाणिज्यवाद इस आर्थिक विस्तारवाद के रास्ते में सबसे बड़ा रुकावट था।

19वीं सदी के अंत में अमेरिका अपने आर्थिक और सैनिक ताकत की बदौलत मुनरो सिद्धांत लागू करने में कामयाब रहा। विभिन्न अवसरों पर इसे लैटिन अमेरिका पर लागू किया गया। सबसे पहले इसे लैटिन अमेरिका में यूरोपीय ताकतों के विस्तार को रोकने के लिए इस्तेमाल किया गया। 1861 में अमेरिका ने डोमिनिकन रिपब्लिक पर स्पेन की चढ़ाई का विरोध किया और आखिरकार 1865 तक स्पेन को पीछे हटना पड़ा। फ्रांस पर भी ये सिद्धांत आजमाया गया, जब फ्रांस ने ऑस्ट्रिया के आर्कड्यूक मैक्सीमिलन को मेक्सिको का मुखिया बनाने की कोशिश की। अमेरिका ने इसे मुनरो सिद्धांत के उल्लंघन के रूप में देखा और इसका ज़ोरदार विरोध किया। हारकर फ्रांस ने आर्कड्यूक मैक्सीमिलन का साथ छोड़ दिया, जिसे मेक्सिको की जनता ने फांसी दे दी।
इस सिद्धांत का सबसे आक्रामक उपसिद्धांत निकाला थियोडोर रूजवेल्ट ने, जिन्होंने लैटिन अमेरिका में अमेरिका की दखलंदाजी को सही ठहराया। हालांकि मुनरो सिद्धांत मूल रूप से इससे अलग था (इसमें यूरोपीय देशों को पश्चिमी गोलार्ध के किसी हिस्से को अपने प्रभाव में या अपने उपनिवेश के तौर पर इस्तेमाल ना करने की बात थी), 20वीं सदी आते-आते आत्मविश्वास से भरा अमेरिका इस क्षेत्र की पुलिस व्यवस्था को अपने प्रभावक्षेत्र में रखना चाहता था। 1900 के शुरुआती सालों में राष्ट्रपति रूजवेल्ट को भय था कि वेनेज़ुएला और उसके कर्जदारों के बीच की तनातनी यूरोपीय ताकतों को हमला करने का मौका दे सकती है। दिसम्बर 1904 में रूजवेल्ट ने फैसला किया कि अमेरिका के पास ये सुनिश्चित करने के लिए दखल देने के सिवाय कोई

चारा नहीं रहेगा, कि पश्चिमी गोलार्ध के दूसरे देश अंतरराष्ट्रीय कर्जदारों की मांगें पूरी करें, अमेरिका के अधिकारों का हनन ना करें या अमेरिकी हितों के ख़िलाफ़ विदेशी आक्रमण को आमंत्रित ना करें। ये फैसला असरदार रहा। इस बीच अमेरिका क्षेत्र में अंदरूनी स्थायित्व स्थापित करने के नाम पर सैन्य बलों का इस्तेमाल बढ़ाता रहा। रूजवेल्ट ने चेतावनी दी कि अमेरिका गलत और नपुंसकता भरे कार्यों के ख़िलाफ़ अंतरराष्ट्रीय पुलिस का इस्तेमाल कर सकता है।

अमेरिका ने सिद्धांत और उपसिद्धांत का इस्तेमाल लैटिन अमेरिकी देशों के घरेलू मामलों में दखल देने के लिए किया था। पनामा कनाल बनाते वक्त भी अमेरिका ने इसी सिद्धांत का इस्तेमाल यूरोपीय देशों पर अपना वर्चस्व कायम करने के लिए किया था। सिद्धांत की आड़ में अमेरिका ने डोमिनिकल रिपब्लिक पर दबाव डालकर उसकी वित्तीय व्यवस्था को मजबूत करने के नाम पर कस्टम विभाग अपने कब्जे में ले लिया। बाद में निकारागुआ, हैती, क्यूबा और डोमिनिक रिपब्लिक की सेना के दखल के बाद अमेरिका को पीछे हटना पड़ा।
मुनरो सिद्धांत और रूजवेल्ट उपसिद्धांत को लैटिन अमेरिका में नफरत भरी निगाहों से देखा जाने लगा। लैटिन अमेरिकी देशों को लग रहा था कि अमेरिका इन सिद्धांतों की आड़ में इस क्षेत्र में अपनी दखलंदाजी बढ़ाने की फिराक में है। इस सिद्धांत की सामूहिक तौर पर अवज्ञा होने लगी और इसके काट के रूप में नया सिद्धांत प्रतिपादित करने के विकल्प पर विचार किया जाने लगा। लैटिन अमेरिकी देशों में मुनरो सिद्धांत के विरोध को देखते हुए 1933 में अमेरिकी विदेश मंत्री कोर्डेल हल ने उस संधि पर हस्ताक्षर किये, जिसमें अमेरिका को पश्चिमी गोलार्ध के किसी भी देश के अंदरूनी मामले में हस्तक्षेप करने से बाज आना था। लेकिन इसके बाद भी कम्यूनिज्म से भयभीत अमेरिका अक्सर राजनीतिक मामलों में हस्तक्षेप करता रहा। 1954 में सेन्ट्रल इंटेलिजेंस एजेंसी (CIA) की साजिश से गुवाटेमाला में लोकतांत्रिक तरीके से चुनी गई जैकब आरबेंज़ की सत्ता उखाड़ फेंकी गई। अमेरिका ने ये कहते हुए CIA के कदम को सही ठहराया कि गुवाटेमाला पर सोवियत संघ का असर था। जबकि सच्चाई ये थी कि दोनों देशों के बीच राजनयिक रिश्ते भी नहीं थे। दरअसल अमेरिकी कार्रवाई युनाइटेड फ्रुट कम्पनी की वजह से हुई थी, गुवाटेमाला में जिसकी जमीन राष्ट्रपति अरबेंज़ के भूमि सुधार नीतियों की भेंट चढ़ गए थे।

क्यूबा के ख़िलाफ़ मुहिम में अमेरिका ने वहां से व्यापार करने और उसे कर्ज देने पर रोक लगा दी, क्यूबा जानेवाले सामानों को बर्बाद कर डाला, और उस छोटे से द्वीप से कम्यूनिज्म को मिटाने के लिए फिदेल कास्त्रो, उसके भाई राओल और मशहूर नेता चे गुवेरा को मार डालने की कई कोशिशें कीं।

चिली में साल्वाडोर अलेंडी को राष्ट्रपति पद का चुनाव जीतने से रोकने की CIA को कोशिश नाकाम रही। CIA ने साल्वाडोर के ख़िलाफ़ जमकर प्रचार किया और विरोधियों को वित्तीय मदद दी। बाद में उसे सत्ता से उखाड़ फेंकने की भी कोशिश हुई। CIA ने इस मकसद को पूरा करने के लिए अधिकारियों को रिश्वत दी और गलत सूचनाएं प्रसारित कीं। आखिरकार उसकी कोशिश कामयाब हुई और जनरल अगस्टो पिनोचेट ने सत्ता अपने कब्जे में ले ली। उसकी अगुवाई में चिली में सत्रह सालों तक सेना का दमनकारी शासन बना रहा।

निकारागुआ में अमेरिका की दखलंदाजी सरकार के ख़िलाफ़ लड़ाकों को वित्तीय मदद देकर हुई। आर्थिक और राजनयिक दबाव का असर ये हुआ कि 1990 के दशक में सैन्डिनिस्टास को चुनाव में मुंह की खानी पड़ी। इस उथल-पुथल ने निकारागुआ को इस क्षेत्र का सबसे गरीब देश बना दिया।

अमेरिका ने कई नए कार्यक्रम शुरु किये, जिनका मकसद था लैटिन अमेरिकी देशों को सोवियत संघ के साथ गठजोड़ से रोकना और इस क्षेत्र में उसका प्रभुत्व बने रहना। उदाहरण के तौर पर राष्ट्रपति जॉन एफ. कैनेडी ने लैटिन अमेरिका के लिए 10 साल तक कई बिलियन डॉलर के कार्यक्रमों की पेशकश की। 1961 में प्रस्तावित इस कार्यक्रम का नाम था 'एलायंस फॉर प्रोग्रेस' और इसे इस तरह तैयार किया गया था कि लैटिन अमेरिका के साथ अमेरिका के सम्बंध प्रगाढ़ हों, जो अब तक तलवार की धार पर चल रहे थे। द्वितीय विश्व युद्ध के बाद

लैटिन अमेरिकी देश यूरोप की तुलना में अमेरिका के कमतर आर्थिक मदद से निराश हो चुके थे। उनका मानना था कि उन्होंने विश्व युद्ध में अमेरिका का पूरा साथ दिया था। इसके अलावा क्षेत्र में अमेरिकी दखलंदाजी पर भी उन्हें आपत्ति थी।

लैटिन अमेरिका को वित्तीय मदद देने की दलील में राष्ट्रपति कैनेडी ने कांग्रेस में कहा, कि अमेरिका धन, विशेषज्ञता और तकनीकि मदद के ज़रिये लैटिन अमेरिका के लोगों का जीवन स्तर बेहतर बनाना चाहता है, जिससे वो देश मजबूत होंगे और कम्यूनिस्ट असर ख़त्म करने में मददगार साबित होंगे। लेकिन ये कार्यक्रम अपने मकसद में पूरी तरह कामयाब नहीं हो पाया। एक अध्ययन के मुताबिक 1960 के दशक में लैटिन अमेरिकी देशों में सिर्फ 2 फीसदी गरीब जनता को कार्यक्रम का सीधा लाभ मिला। उधर 1960 के दशक के अंत तक अमेरिका और लैटिन अमेरिका के रिश्ते बद से बदतर होते गए। निश्चित रूप से एलायंस लैटिन अमेरिका में लोकतंत्र लाने में नाकाम रहा। 1970 के शुरुआती सालों में ये कार्यक्रम ख़त्म हुआ, लेकिन तब तक लैटिन अमेरिका की 13 देशों में लोकतांत्रिक सरकारों की जगह सैनिक शासन कायम हो चुके थे।

लैटिन अमेरिका में क्षेत्रीय गठबंधन

लैटिन अमेरिका में क्षेत्रीयता का इतिहास अमेरिकी समर्थकों और क्षेत्र के राजनीतिक, राजनयिक सैनिक और आर्थिक मामलों में अमेरिकी हस्तक्षेप के विरोधियों के बीच परस्पर विरोध का इतिहास रहा है। फिर भी इस बात से इंकार नहीं किया जा सकता कि अमेरिका और इस क्षेत्र के कई देशों के बीच प्रगाढ़ सम्बंध बने। उदाहरण के तौर पर मेक्सिको, सेन्ट्रल अमेरिकन और कैरिबियन देशों के भौगोलिक करीबी होने और व्यक्तिगत सम्बंधों की वजह से अमेरिका के साथ मधुर रिश्ते बने रहे। करीबियों के चलते प्रवासी और व्यापारिक रिश्तों में इज़ाफ़ा हुआ और आर्थिक रिश्ते भी मजबूत हुए। इन कारणों से क्षेत्रीय संगठनों का विकास हुआ और किसी देश के लिए इन संगठनों में शामिल होने या ना होने के फैसले का आधार भी मजबूत हुआ।

लैटिन अमेरिकी देशों के इन क्षेत्रीय संगठनों में हिस्सेदारी इस बात पर भी निर्भर हुई कि इससे उन्हें क्या लाभ मिल रहे हैं। लाभ की व्याख्या में आर्थिक विकास, व्यापार में बढ़ोत्तरी और आसानी, वित्तीय लेन-देन, विस्तृत बाज़ार और अनुकूल वैश्विक आर्थिक समझौते शामिल हैं। राजनीतिक असर की मजबूती भी एक वजह थी, जिससे क्षेत्र में उस देश की भूमिका महत्त्वपूर्ण हो। इसके अलावा सामरिक फायदे हो रहे हैं या नहीं, इसका भी विश्लेषण भी किया जाता रहा। दूसरे शब्दों में कहा जाए तो किसी भी देश का क्षेत्रीय संगठनों में शामिल होने का फैसला इस बात पर निर्भर करता था कि शामिल ना होने की स्थिति में तुलनात्मक दृष्टि से आर्थिक या राजनीतिक फायदे हो रहे हैं या नहीं।

लैटिन अमेरिका में गठबंधन

UNASUR से पहले लैटिन अमेरिका में कई क्षेत्रीय संगठन थे। द ऑर्गेनाइजेशन ऑफ अमेरिकन स्टेट्स (OAS) इस क्षेत्र के सबसे पुराने क्षेत्रीय संगठनों में एक है। OAS का गठन 1948 में हुआ और कोलम्बिया के बोगाता में OAS के मसौदे पर हस्ताक्षर हुए। इसे दिसम्बर 1951 से लागू किया गया। संगठन के गठन का मकसद मसौदे की धारा 1 में स्पष्ट किया गया है - "An order of peace and justice, to promote their solidarity, to strengthen their collaboration, and to defend their sovereignty, their territorial integrity, and their independence." आज OAS में क्षेत्र के 35 देश शामिल हैं इसे गोलार्ध में सबसे प्रमुख राजनीतिक, न्यायिक और सामाजिक और सरकारी फोरम माना जाता है। इसके अलावा इसे 69 देशों और यूरोपीय संघ (EU) में स्थाई पर्यवेक्षक का दर्जा भी हासिल है। संगठन अपनी अनिवार्य नीतियों को लागू करने के लिए उन विन्दुओं पर ज़ोर देता है जो इसके मुख्य आधार हैं – लोकतंत्र, मानवाधिकार, सुरक्षा, विकास, एक-दूसरे को राजनीतिक वार्ता के ज़रिये मदद पहुंचाना, संयुक्त कार्रवाई, आपसी सहयोग, न्यायिक और सम्बंधित संगठन – इनके ज़रिये OAS इस गोलार्ध में अपने लक्ष्यों को अंजाम तक पहुंचाने की कोशिश करता है।

OAS में क्यूबा को शामिल करने के मसले पर सदस्य देशों के बीच मतभेद बने रहे। मतभेद का मुख्य आधार था क्षेत्र में लोकतंत्र को मजबूत करने का OAS का लक्ष्य। क्यूबा में आंदोलन के बाद 1959 में फिदेल कास्त्रो की कम्यूनिस्ट पार्टी सत्ता में आई। इसके साथ ही अमेरिका ने क्यूबा को संगठन से निकालने की कोशिश तेज कर दी। इसके विरोध में कुछ सदस्य देशों का कहना था कि क्यूबा को निकालने की कोशिश OAS के उस आदर्श के ख़िलाफ़ है, जिसमें किसी देश के अंदरूनी मामले में हस्तक्षेप नहीं करने की बात की गई है। आखिरकार जनवरी 1962 में क्यूबा को ये कहते हुए OAS से निलम्बित कर दिया गया कि इसकी लेनिनिस्ट-मार्क्सिस्ट सरकार अमेरिकी व्यवस्था के आदर्शों और लक्ष्यों के ख़िलाफ़ थी। 2009 में क्यूबा पर से एकमत से निलम्बन इस शर्त के साथ खारिज किया गया कि वो संगठन में दोबारा शामिल होने से पहले वार्ता के ज़रिये OAS के आदर्शों के अनुरूप अपनी प्रतिबद्धता जताए। लेकिन क्यूबा के अधिकारियों ने साफ-साफ कहा कि वो दोबारा संगठन में शामिल होने के इच्छुक नहीं हैं। हालांकि राष्ट्रपति राओल कास्त्रो ने 2015 में पनामा सिटी में हुए OAS सम्मेलन में शामिल होने के लिए पनामा के राष्ट्रपति जुआन कार्लोस वेरेला का न्योता स्वीकार कर लिया था। सवाल है कि अमेरिका OAS के साथ अपने रिश्ते किस प्रकार बनाना चाहता है, जबकि ओबामा प्रशासन क्यूबा के साथ राजनयिक रिश्तों की बहाली चाहता है। विश्लेषकों का कहना है कि OAS सम्मेलन ने क्षेत्रीय विचारधारा के एकीकरण और चीन की बढ़ती ताकत को देखते हुए लैटिन अमेरिका के साथ रिश्ते मजबूत करने की अमेरिका की मंशा साफ कर दी है। हालांकि सम्मेलन के दौरान हुई अनौपचारिक बातचीत सम्मेलन की वार्ता से अधिक प्रभावशाली रही है।

मंदी ने जैसे ही अमेरिका की अर्थव्यवस्था को प्रभावित किया, अमेरिकी बजट की प्राथमिकताओं से OAS नदारद हो गया। संगठन का प्रभाव भी धीरे-धीरे कम होने लगा। रिपब्लिकन पार्टी के सदस्यों ने OAS को सालाना वित्तीय मदद देनी भी बंद करने की कोशिश की, जो 43 मिलियन अमेरिकी डॉलर थी। क्षेत्र में संगठन का प्रभाव कम होने की एक और वजह थी - क्षेत्र की सामाजिक-राजनीतिक मामलों पर वांछित प्रतिक्रिया देने में असमर्थ रहना। उदाहरण के तौर पर 2009 में होंडुरास में विद्रोह ने राष्ट्रपति मैन्युएल ज़ेलाया को सत्ता से उखाड़ फेंका और उन्हें देश छोड़कर भागना पड़ा। लेकिन ओबामा सरकार ने इस घटना पर कोई प्रतिक्रिया व्यक्त नहीं की। यहां तक कि अमेरिका ने विद्रोह होने से भी इंकार कर दिया। अमेरका के इस रुख ने लैटिन अमेरिकी नेताओं को निराश कर दिया और एक ऐसे संगठन की ज़रूरत महसूस होने लगी, जो अमेरिकी प्रभाव से मुक्त हो।

हालांकि लैटिन अमेरिका में अमेरिका के बढ़ते हस्तक्षेप को देखते हुए पहले से ही एक ऐसे संगठन की ज़रूरत महसूस की जा रही थी, जिसमें उत्तर में स्थित पड़ोसी देश के असर से दूर हो। इस ज़रूरत को ध्यान में रखते हुए 1986 में रियो ग्रुप का गठन किया गया। लेकिन रियो ग्रुप का वजूद सिर्फ सालाना सम्मेलनों तक ही सीमित रहा, और वो एक स्थाई संगठन का स्वरूप हासिल नहीं कर सका। इसके अलावा और भी उपक्षेत्रीय संगठन बने, लेकिन उनके सदस्यों की संख्या काफी कम थी। 1951 में सेन्ट्रल अमेरिकी देशों के विकास के लिए ऑर्गेनाइजेशन ऑफ सेन्ट्रल अमेरिकी स्टेट्स का गठन हुआ था। इसकी जिम्मेदारी सेन्ट्रल बैंक फॉर अमेरिकन इन्टेग्रेशन, सेन्ट्रल अमेरिकन कॉमन मार्केट और सेक्रेटारियेट फॉर सेन्ट्रल इकोनॉमिक को-ओपरेशन (SEICA) का गठन करना था। व्यापार को बढ़ावा देने के लिए भी संगठनों का निर्माण हुआ – 1960 में द लैटिन अमेरिकन फ्री ट्रेड एसोसियेशन (LAFTA); ये संगठन लैटिन अमेरिकी देशों के बीच मुक्त व्यापार और शुल्क में दूसरे छूटों के लिए गठित किया गया था। 1980 में लैटिन अमेरिकन इन्टेग्रेशन ऑर्गेनाइजेशन का उदय हुआ जिसका मकसद क्षेत्र में आर्थिक और सामाजिक सहयोग स्थापित करना था।

LAFTA की नाकामी से उप-क्षेत्रीय संगठनों के गठन की ज़रूरत महसूस होने लगी। 1969 में कार्टेजीना समझौते के तहत एंडीन ग्रुप का गठन हुआ। एंडीना ग्रुप को पहले एंडीन पैक्ट के रुप में जाना जाता था, जिसे बोलिविया, पेरु, वेलेज़ुएला, कोलम्बिया और इक्वाडोर ने मिलकर गठित किया था और जो एक अंतर-सरकारी संगठन था। इसका मकसद बाज़ार का विस्तार करना और क्षेत्र में एक प्रभावशाली आर्थिक विकास सुनिश्चित

करना था। एंडीन पैक्ट के दो बुनियादी आदर्श थे – पहला, कि ये एक घनिष्ठ ढांचागत मॉडल था, जो बाज़ार के विस्तार के आधार पर सदस्यों की बहाली करता था, जिसमें व्यक्तिगत स्तर पर संयुक्त विकास कार्यक्रमों को बढ़ावा देना था और तीसरी दुनिया के देशों को आश्रय देना था। दूसरा, संस्थागत स्तर पर एंडीज संगठन यूरोपीय संगठन से प्रेरित था, जिसमें कार्यरत और ग़ैर-कार्यरत स्कीमों की बहुलता थी। इस पैक्ट के गठन का मुख्य आदर्श "छोटे और मध्यम आकार के दक्षिण अमेरिकी देशों का उनके विशाल पड़ोसी देशों से रक्षा करना था," और इसी मकसद से उसने मजबूत आर्थिक संघ बनाने पर ज़ोर दिया। पैक्ट के दो लक्ष्य थे – सदस्य देशों में तेज औद्योगिक और आर्थिक विकास और सदस्य देशों के बीच समानता के आधार पर विकास कार्यक्रम। एंडिन देश इन लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए काम तो कर रहे थे, लेकिन इनमें कई देशों ने आपसी व्यापार को अधिक बढ़ावा देने के लिए दूसके लैटिन अमेरिकी देशों और कैरिबियाई देशों के साथ द्विपक्षीय समझौते शुरु कर दिये। एंडियन देशों का पूर्ववर्ती लक्ष्य और लैटिन अमेरिका और कैरिबियाई देशों की नई पहल ने एक नया सहयोगात्मक आंदोलन शुरु किया, जिसका नाम था "ओपन रिज़्नलिज्म"।

1992 में क्षेत्रीय व्यापार को बढ़ावा देने के लिए मेरकोसुर का गठन किया गया। मेरकोसुर का बाज़ार ब्राज़ील, अर्जेंटीना, उरुग्वे और पाराग्वे के बीच सामानों के मुफ्त आवागमन, सेवाओं और सदस्य देशों के नागरिकों के बीच व्यापार समझौता था। कुछ विशेषज्ञों का मानना है कि मेरकोसुर का राजनीतिक एजेंडा भी था, लेकिन संगठन ने कभी किसी तरह का राजनीतिक रुझान नहीं दिखाया। 2012 में वेनेज़ुएला भी इस संगठन में शामिल हो गया।

मेरकोसुर का मुख्य लक्ष्य सदस्य देशों के बीच व्यापार की रुकावटों को ख़त्म करना था। अंतर-क्षेत्रीय व्यापार में भारी-भरकम कर और आमदनी में असमानता सबसे बड़ी चुनौती थे। मेरकोसुर दक्षिणी लैटिन अमेरिकी देशों को इकलौते आर्थिक ज़ोन के दायरे में लाना चाहता है। फिलहाल मेरकोसुर यूरोपीय संघ, नॉर्थ अमेरिकन फ्री ट्रेड एग्रीमेंट (NAFTA) और एसोसियेशन ऑफ साउथ ईस्ट नेशंस (ASEAN) के बाद दुनिया का चौथा सबसे बड़ा व्यापारिक संगठन है, जो सालाना 2.9 ट्रिलियन डॉलर का कारोबार करता है। मेरकोसुर में शामिल देशों की आबादी करीब 26 करोड़ है। मेरकोसुर में पांच सम्बंधित सदस्य भी हैं – बोलिविया, चिली, कोलम्बिया, इक्वाडोर और पेरू, जिन्हें बाज़ार के पूरे अधिकार प्राप्त नहीं हैं और सीमित मतदान अधिकार हैं। मेरकोसुर अपने सदस्य देशों को दूसरे देशों के साथ मुक्त व्यापार संधि करने की इजाज़त नहीं देता है। लिहाजा मेरकोसुर के सदस्य देश एंडियन कम्यूनिटी जैसी छोटी संस्थाओं के सदस्य नहीं बन सकते। मेरकोसुर ने फ्री ट्रेड एग्रीमेंट्स ऑफ द अमेरिकाज़ (FTAA) के विघटन में भी अहम भूमिका निभाई, जो 2005 में ख़त्म हो गया। मेरकोसुर के सदस्य देशों की दलील थी कि FTAA इस क्षेत्र में अमेरिका की दखलंदाज़ी बढ़ाएगा और ये सदस्य देशों में असामनता की वजह से आर्थिक असमानता बढ़ाएगा।

मेरकोसुर अब तक काफी हद तक सफल संगठन रहा है, जिसने सदस्य देशों के बीच मुक्त व्यापार को प्रोत्साहन देने के अलावा बाकी दुनिया के साथ भी आर्थिक संधियों में मददगार रहा है।

1994 में NAFTA का गठन हुआ, जो दुनिया के सबसे बड़े मुक्त व्यापार ज़ोन में से एक था और जिसने कनाडा, अमेरिका और मेक्सिको के बीच मजबूत व्यापारिक विकास की बुनियाद रखी। इस संगठन का ज़ोर अमेरिका, मेक्सिको और कनाडा के बीच इस्तेमाल की व्यापारिक वस्तुओं पर से कर ख़त्म करना था। इस समझौते से कई उद्योगों को कर मुक्त कर दिया गया। इनमें कृषि उल्लेखनीय है, जबकि टेक्सटाइल्स और ऑटोमोबाइल्स क्षेत्र में भी कर कम किये गए। NAFTA ने बौद्धिक सम्पदा का संरक्षण भी लागू किया, विवाद दूर करने की प्रक्रिया का गठन किया और क्षेत्रीय स्तर पर कामगार और पर्यावरण से जुड़े मानक तय किये। हालांकि कई देश अब इन दिशाओं में और मजबूत मानक लाने की पैरोकारी कर रहे हैं।

द बोलिवियन एलायंस फॉर द पीपुल्स ऑफ आवर अमेरिका (ALBA) का गठन वेनेज़ुएला के स्वर्गीय राष्ट्रपति ह्यूगो चेवाज़ और उस वक्त क्यूबा के राष्ट्रपति फिदेल कास्त्रो ने FTAA के विरोध में 2004 में किया था। (FTAA को अमेरिका, मेक्सिको, कोलम्बिया और पेरु से प्रोत्साहन मिल रहा था) ALBA में लैटिन अमेरिका और कैरिबिया के 11 देश शामिल थे और वामपंथी विचारधाराओं पर आधारित आर्थिक और राजनीतिक सहयोग चाहते थे। संगठन ने अन्य विषयों के अलावा दूसरे देशों की सरकारों पर केन्द्रित कर्ज और निवेश जैसे मॉडल पर ज़ोर दिया।

महाद्वीप के पश्चिमी हिस्से में पैसिफिक एलायंस नाम का आर्थिक गठबंधन है, जिसके सदस्य हैं चिली, कोलम्बिया, मेक्सिको और पेरू, और जिसका गठन 2011 में हुआ था। इसमें अमेरिका समेत पश्चिमी गोलार्ध के 12 देशों को पर्यवेक्षक का दर्जा मिला। कोस्टारिका और पनामा इस संगठन में पूरी सदस्यता हासिल करने के दावेदार हैं। ये संगठन मुख्य रूप से सदस्य देशों की अर्थव्यवस्था के समन्वय और एशिया-पैसिफिक क्षेत्रों में व्यापार बढ़ाने की दिशा में कार्यरत है। इसके मसौदे में साफ है कि सदस्य देशों को लोकतांत्रिक होना चाहिए और मानवाधिकार का सम्मान करना चाहिए।

इन सभी संगठनों में समान बात ये थी कि ये छोटे उप-क्षेत्रों तक सीमित थे और इनके लक्ष्य सीमित थे। लक्ष्यों के आधार या तो आर्थिक थे या सामाजिक और कुछेक मामलों में दोनों पहलुओं को समावेश करने की कोशिश की गई थी।

इन्हीं कमियों को देखते हुए UNASUR का जन्म एक ऐसे विशाल संगठन के रूप में हुआ, जो अन्य लक्ष्यों के अलावा अमेरिका का प्रभाव कम करने की कोशिश में है, और सभी देशों को अमेरिका के समकक्ष लाने के लिए प्रयासरत है। UNASUR ने ना सिर्फ अमेरिका से, बल्कि कनाडा, मेक्सिको और सेन्ट्रल अमेरिकी देशों से भी दूरी बना रखी है, जो अमेरिका के करीबी हैं। इस संगठन को क्षेत्र में 'लेफ्ट ऑफ द सेन्टर' के आगे बढ़ने से फायदा हुआ है, जिसका मकसद भी क्षेत्र के देशों को अमेरिका की छत्रछाया से निकालना है।

यूनियन ऑफ साउथ अमेरिकन नेशन्स (UNASUR)

1980 के दशक में कर्ज संकट, 1990 के दशक के आखिरी सालों में आमदनी में असमानता, गरीबी में बढ़ोत्तरी और बेरोजगारी में इज़ाफ़ा का दौर रहा। आम लोगों की समस्याओं के निदान के लिए सामाजिक आंदोलन परवान चढ़ने लगे। कई विशेषज्ञ 1998 में ह्यूगो शेवाज़ के वेनेज़ुएला के राष्ट्रपति चुने जाने को लैटिन अमेरिकी जनता के नए राजनीतिक झुकाव की शुरुआत के रूप में देखते हैं। इसके बाद 2001 में पोर्टो एलेग्रे में वर्ल्ड सोशल फोरम का गठन हुआ और ब्राज़ील, वेनेज़ुएला, अर्जेंटीना, उरुग्वे, चिली और प्राग्वे में लेफ्ट या लेफ्ट टू सेन्टर सरकारों का गठन हुआ। इन सरकारों का लक्ष्य आमतौर पर एक ही था और वो पिछले कुछ दशकों से क्षेत्र में चल रहे आर्थिक नीतियों में बदलाव चाहते थे।

आर्थिक, राजनीतिक और सैनिक रूप से ताकतवर पड़ोसी देश अमेरिका को क्षेत्र की राजनीतिक और आर्थिक नीतियों में अपना दबदबा बनाने का आरोप लगा रहे थे। लैटिन अमेरिका की नई लेफ्ट टू सेन्टर सरकारों ने ना सिर्फ आर्थिक नीतियों को निशाना बनाया, बल्कि राजनीतिक ज़मीन पर भी पांव जमाने की कोशिश की। ब्राज़ील, अर्जेंटीना और वेनेज़ुएला की सरकारों ने अमेरिका के प्रभाव से मुक्त होने की अपील की।

क्षेत्रीय स्तर पर अर्जेंटीना का पतन और मेक्सिको का उत्तरी अमेरिका और NAFTA की ओर झुकाव ने ब्राज़ील को एक नए क्षेत्रीय संगठन के रूप में दक्षिणी अमेरिका में नए रोल की अगुवाई करने का मौका दे दिया – द यूनियन ऑफ साउथ अमेरिकन नेशंस या UNASUR. अक्टूबर 2003 में ब्यूनस आयर्स मसौदे पर लूला डि सिल्वा और नेस्टर किर्चनर के हस्ताक्षरों ने दक्षिण अमेरिका में एक नई क्षेत्रीय गतिविधि की शुरुआत की। इस संगठन का मसौदा उस मुक्त व्यापार नीति और वाशिंगटन समझौते को चुनौती देना था, जिसका पालन क्षेत्र के

अधिकतर देश कर रहे थे। मसौदे में दोनों राष्ट्रपतियों ने आर्थिक विकास और सम्पत्ति के वितरण में अधिक समानता लाने पर ज़ोर दिया। लेकिन मसौदे में अंतरराष्ट्री मुद्रा कोष (IMF) के किसी भी सुधार को शामिल ना किया जाने पर इसकी आलोचना हुई, जो विदेशी कर्ज और इसे चुकता करने की नीतियों पर नियंत्रण रखता है। कुल मिलाकर इस संगठन को अमेरिका के मुक्त व्यापार समझौते के विरोधी संगठन के रूप में देखा गया।

इसी तरह साउथ अमेरिकन कम्यूनिटी ऑफ नेशंस (CSN) का गठन हुआ, जिसके मसौदे पर दक्षिण अमेरिकी देशों के राष्ट्रपतियों ने 8 दिसम्बर 2004 में पेरू के कुज़को में हस्ताक्षर किये। मेरकोसुर और एंडियन कम्यूनिटी के प्रस्तावों को वृहत रूप देने, एकाधिक संगठनों की सदस्यता और टकराव पैदा करनेवाले मुद्दों को दूर करने के लिए CSN का गठन हुआ। 30 सितम्बर 2005 को ब्राज़ील के ब्रासीलिया और 9 दिसम्बर 2006 को बोलिविया के कोचाबम्बा में सदस्य देशों के प्रमुखों ने क्षेत्र के लिए एक सामूहिक सामरिक समझौता लागू किया। दूसरे समझौते ने बाद में यूनियन ऑफ साउथ अमेरिकन नेशंस (UNASUR) के गठन का रास्ता साफ किया। इसके मसौदे में दोहरी सदस्यता की परेशानियों, मुद्दों के टकराव, दोहरी सदस्यता और विभिन्न स्तरों पर समन्वय शामिल किया गया, ताकि विशाल स्तर पर एकीकरण हो सके। 23 मई 2008 को UNASUR के समझौते को अनुमोदन प्राप्त हुआ, जिसके बाद इसका मुख्यालय इक्वाडोर की राजधानी क्वीटो में तय किया गया, जबकि इसका संसद बोलिविया के कोचाबम्बा में बनाना तय हुआ।

इस संगठन के लिए फायदे की बात ये रही कि इसका उदय उस वक्त हुआ, जब अमेरिका अपने ही घर में आर्थिक संकट से जूझ रहा था और इस क्षेत्र में उसका प्रभाव कम हो रहा था। आर्थिक मंदी और शेयर बाज़ार में भारी गिरावट की वजह से अमेरिका का पूरा ध्यान घरेलू मामलों पर केन्द्रित रहा और क्षेत्र के मामलों में उसका हस्तक्षेप कम होता गया।

वैश्विक स्तर पर आर्थिक मंदी ने इस क्षेत्र के देशों और उनके शक्तिशाली पड़ोसी देशों के बीच सम्बंध तनावपूर्ण बना दिये। लैटिन अमेरिकी देशों ने दुनियाभर की आर्थिक मंदी के लिए अमेरिकी और यूरोपीय नीतियों को ज़िम्मेदार ठहराया और इस मंदी को ग्रेट डिप्रेशन के बाद की सबसे बड़ी मंदी बताया। इसके साथ ही उन्होंने इस स्थिति से निपटने में लैटिन अमेरिकी देशों की क्षमता पर भी ज़ोर दिया। ये वो वक्त था, जब चीन आर्थिक दृष्टि से एक मजबूत देश के रूप में उभर रहा था। यानि अमेरिका और यूरोप के विकल्प के तौर पर चीन को देखा जाने लगा और लैटिन अमेरिकी देशों को भरोसा हो चला कि अमेरिका पर आश्रित होना कम किया जाए, तो उनकी आर्थिक स्थिति सुधर सकती है। ये कारक भी UNASUR के मजबूत होने में सहायक साबित हुआ।

UNASUR लक्ष्यों और सदस्यता के विस्तार के मामले में भी अपने पूर्ववर्ती क्षेत्रीय संगठनों से इत्तिफाक नहीं रखता। फिलहाल UNASUR के सदस्य देश हैं – अर्जेंटीना, बोलिविया, ब्राज़ील, चिली, कोलम्बिया, इक्वाडोर, गुवाना, सूरीनाम, पेरू, उरुग्वे और वेनेज़ुएला। UNASUR के सदस्य देशों ने 2012 में पेरू की सदस्यता रद्द कर दी। वजह थी पेरू में लोकतांत्रिक तरीके से चुने गए राष्ट्रपति पर अभियोग के बाद उन्हें पद से हटा देना, जिसे "संवैधानिक विद्रोह" बताया गया। (प्राग्वे के राष्ट्रपति फर्नांडो लूगो को जनता ने लोकतांत्रिक तरीके से चुना था। करीब छह दशक तक देश की इकलौती राजनीतिक पार्टी – द कोलोरैडो पार्टी – से अलग पहली बार कोई राष्ट्रपति सत्ता में आया था। लेकिन कांग्रेस पर पार्टी का ही असर रहा और राष्ट्रपति लूगो किसी भी तरह का महत्त्वपूर्ण बदलाव करने में असमर्थ रहे। चार साल की मियाद पूरी होने के बाद राष्ट्रपति लूगो पर अक्षम होने का आरोप लगा और उनके ख़िलाफ़ अविश्वास प्रस्ताव लाया गया। माना जाता है कि राष्ट्रपति लूगो को अपनी सफाई देने का मौका नहीं दिया गया। चौबीस घंटे के भीतर उनपर अभियोग लगाकर उन्हें सत्ता से हटा दिया गया। ये पहली घटना थी, जिसे लैटिन अमेरिका में संवैधानिक विद्रोह का नाम दिया गया था। इस घटना के बाद UNASUR और मेरकोसुर दोनों संगठनों ने प्राग्वे की सदस्यता रद्द कर दी थी।)

ये स्पष्ट हो गया है कि लैटिन अमेरिका के इकलौते संगठन ने खुद को अमेरिका के प्रभाव से दूर रखने में सफलता पाई है। UNASUR पूरी तरह दक्षिण अमेरिकी सदस्य देशों के दिये संसाधनों और राजनयिक कदमों पर कार्यरत है। UNASUR का लक्ष्य है एकल दक्षिण अमेरिकी बाज़ार का गठन, जो करमुक्त हो और जिससे अंतरराष्ट्रीय ज़रूरतों के मुताबिक क्षेत्र का विकास किया जा सके। मसलन, इंटर ओशियानिक हाईवे, जिसका निर्माण ब्राज़ील और पेरू के बीच हो रहा है। UNASUR के एजेंडे में साझा रक्षा कार्यक्रम भी शामिल है, ताकि "आपसी सैन्य ज़रूरतों के अलावा, विश्वास और सुरक्षा के लिए कदम उठाए जा सकें, और साझा सैनिक और औद्योगिक विकास" किए जा सकें। इसके अलावा सदस्य देशों के बीच सैलानियों और प्रवासी मजदूरों का बेरोक-टोक आवागमन हो सके। इस लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए UNASUR के सामने राजनीतिक और वैचारिक खाईयों को भरने की चुनौती है, क्योंकि क्षेत्र के विभिन्न देशों में इन मसलों पर विचार अलग-अलग हैं।

संगठन के विशेष लक्ष्य:

1) सदस्य देशों के बीच राजनीतिक बातचीत को आगे बढ़ाना, ताकि दक्षिण अमेरिकी समन्वय को मजबूत किया जा सके और अंतरराष्ट्रीय मसलों में UNASUR की अहम भागीदारी हो सके।

2) समानता और समावेशन के आधार पर सामाजिक और मानवीय विकास ताकि गरीबी और क्षेत्र में असमानता को दूर करने में मदद मिल सके।

3) शिक्षा का प्रसार, विशेष शिक्षा के समान अवसर, और पाठ्यक्रमों और डिग्रियों की क्षेत्रीय स्तर पर मान्यता।

4) क्षेत्र में संसाधनों के दीर्घकालीन और न्यायोचित इस्तेमाल के लिए ऊर्जा का समन्वय।

5) दीर्घकालीन सामाजिक और आर्थिक विकास के लिए क्षेत्र और वहां के नागरिकों के ढांचागत विकास के लिए आपसी समन्वय बढ़ाना।

6) सदस्य देशों की आर्थिक और वित्तीय नीतियों के अनुरूप योजनाएं तैयार करना, जिनसे उनके बीच वित्तीय समन्वय बना रहे।
7) जैवविविधता, जल संसाधन और पारिस्थितिकी की रक्षा करना और सदस्य देशों के बीच आपदा रोकथाम और मौसम में बदलाव के मुद्दों पर सहयोग करना।

8) सटीक और प्रभावशाली माध्यमों का इस्तेमाल कर असमानता दूर कर समानता के आधार पर समन्वय स्थापित करना।

9) सदस्य देशों में रहनेवाले नागरिकों के अधिकारों की प्रगति के आधार पर सुरक्षा, ताकि दूसरे सदस्य देश की नागरिकता हासिल करने में परेशानी ना हो।

10) समानता के आधार पर सामाजिक सुरक्षा और स्वास्थ्य सेवाएं।

11) प्रवासन के नियमितीकरण और नीतियों की सौहार्द्रता के ज़रिये मानवता और कामगारों के अधिकारों का सम्मान करना।

12) विकास और असरदार आविष्कार, गतिशीलता, पारदर्शी, समानता और संतुलन के आधार पर आर्थिक और व्यापार में सहभागिता स्थापित करना। विकास और आर्थिक मजबूती को बढ़ावा देना ताकि सदस्य देशों के बीच असमानता दूर हो सके। साथ ही सभी तबके के नागरिकों का विकास और गरीबी उन्मूलन।
13) छोटे और मध्यम उद्योगकर्मियों, कोओपरेटिव कम्पनियों, नेटवर्क और उत्पादन के दूसरे संस्थानों पर ध्यान देना, ताकि औद्योगिक और उत्पादन क्षेत्रों में एकरूपता बनी रहे।

14) शोध, आविष्कार, तकनीकि हस्तांतरण और उत्पादन की नई योजनाएं बनाना और उन्हें लागू करना, ताकि क्षमता, निरंतरता और सही वैज्ञानिक और तकनीकि विकास संभव हो सके।

15) ज्ञान की अभिव्यक्ति को बढ़ावा देकर सदस्य देशों के नागरिकों की पहचान इस तरह मजबूत करना, कि सांस्कृतिक विविधता को प्रोत्साहन मिल सके।

16) दक्षिण अमेरिकी समन्वय नीतियों को तय करने के लिए UNASUR में आपसी और विभिन्न सामाजिक संगठनों के बीच मेलजोल और वार्ता में नागरिकों की भागीदारी मजबूत करने की योजना तैयार करना।

17) अंतरराष्ट्रीय मानकों और नियमों के मुताबिक और सदस्य देशों में विशिष्ट एजेंसियों के बीच सहयोग के ज़रिये आतंकवाद, भ्रष्टाचार, वैश्विक ड्रग की समस्या, इंसानों की कबूतरबाजी, छोटे बंदूकों और दूसरे हथियारों की तस्करी, संगठित अपराध, निशस्त्रीकरण, परमाणु हथियारों पर रोकथाम से लड़ने में भागीदारी करना।

18) UNASUR के सदस्य देशों के न्यायिक अधिकारियों के बीच समन्वय स्थापित करना।

19) सूचना और रक्षा मामलों से जुड़े अनुभवों का आदान-प्रदान।

20) आम लोगों की सुरक्षा में मजबूती लाने के लिए आपसी सहयोग।

21) सूचनाओं, अनुभवों और प्रशिक्षण के आदान-प्रदान के ज़रिये दक्षिण अमेरिकी देशों के बीच आपसी सहयोग विकसित करना।

संगठन नेतृत्व और संस्थान

सदस्य देशों के प्रमुख एक महासचिव का चुनाव करते हैं, जो संगठन के अगुवा के तौर पर दो साल तक काम करता है। अर्जेंटीना के पूर्व राष्ट्रपति नेस्चर किर्चनर मई 2010 में UNASUR के पहले महासचिव चुने गए और अक्टूबर 2010 में मृत्यु होने तक महासचिव बने रहे। वर्तमान में कोलम्बिया के पूर्व राष्ट्रपति एरनेस्टो सैम्पर पिज़ानो सचिवालय का नेतृत्व कर रहे हैं। UNASUR के महासचिव का काम अलग-अलग विभागों को उनके कार्यों में मदद करना, UNASUR की बैठकों में सचिव का रोल निभाना, सालाना रिपोर्ट तैयार और प्रस्तुत करना तथा UNASUR के लक्ष्यों को पूरा करने के लिए दूसरे क्षेत्रीय बहुराष्ट्रीय ग्रुपों के साथ समन्वय करना है। UNASUR में एक अस्थाई राष्ट्रपति भी होता है, जिसका कार्यकाल एक साल का होता है, जो UNASUR की बैठकों की अध्यक्षता करता है और अंतरराष्ट्रीय स्तरों पर संगठन का प्रतिनिधित्व करता है। अस्थाई राष्ट्रपति का चयन सदस्य देश के नाम की वर्णमाला पर आधारित होता है और एक सदस्य के बाद दूसरा सदस्य देश राष्ट्रपति नामित करता है। फिलहाल इस पद पर उरुग्वे के टबारे वाज़क्यूज़ विराजमान हैं।

UNASUR में चार परिषद हैं, जो महासचिव के साथ मिलकर ग्रुप का मुख्य अवयव बनाते हैं:

1) राष्ट्र प्रमुखों का परिषद UNASUR के ढांचे में सबसे वरिष्ठ होता है, जो राजनीतिक सहयोग तथा दक्षिण अमेरिकी समन्वय के लिए कार्य योजना और कार्यक्रम तय करता है। UNASUR के हर सदस्य देश की इस परिषद में नुमाइंदगी होती है। संयुक्त रूप से वो UNASUR के मंत्री स्तर के परिषद के प्रस्तावों पर फैसला लेते हैं।
2) विदेशी मामलों के मंत्रियों का परिषद, जिसमें UNASUR के सदस्य देशों के विदेश मंत्री शामिल होते हैं, और जो राष्ट्र प्रमुखों के फैसलों को लागू करने के लिए जिम्मेवार होते हैं। ये मंत्री साथ मिलकर दक्षिण अमेरिकी देशों के समन्वय की योजनाओं के सामूहिक क्रियान्वयन के लिए काम करते हैं। ये विशेष नीतियों को लागू करने के लिए टास्क ग्रुपों का भी गठन करते हैं।
3) प्रतिनिधि परिषद दोनों परिषदों के तैयार किये गए प्रस्तावों को लागू करता है। प्रतिनिधि परिषद दक्षिण अमेरिकी देशों के समन्वय में आम जन की भागीदारी बढ़ाने की कोशिश करता है।

4) मंत्री और खंड स्तर परिषद UNASUR का मुख्य कार्यकारी परिषद होता है, जो संगठन के राजनीतिक खंडों के तय किये गए लक्ष्यों और दिशानिर्देशों को अमली जामा पहनाने के लिए जिम्मेदार होता है। इसी परिषद के नेतृत्व में स्वास्थ्य, ऊर्जा, विज्ञान और तकनीकि, वित्त जैसे विभाग काम करते हैं। दक्षिण अमेरिकी रक्षा परिषद भी इसी विशाल ग्रुप का हिस्सा है, जिसमें सदस्य देशों के रक्षा मंत्री शामिल होते हैं और अपनी सालाना बैठक में क्षेत्रीय रक्षा नीतियों और आपसी सहयोग की योजनाओं पर चर्चा करते हैं। UNASUR को अस्थाई राष्ट्रपति देनेवाला देश रक्षा परिषद का अध्यक्ष चुनता है।

उपलब्धियां और चुनौतियां

UNASUR मुख्य रूप से सदस्य देशों के सार्वजनिक मंच के रूप में काम करता है। हालांकि UNASUR के सदस्य देशों ने क्षेत्रीय समन्वय के लिए कई महत्त्वाकांक्षी प्रस्ताव तैयार किये हैं, लेकिन कुछ पर्यवेक्षकों का मानना है कि ये संगठन अभी तक अपनी योजनाओं को पूरी तरह अमली जामा पहनाने में नाकाम रहा है। यूरोशिया ग्रुप में ब्राज़ील के एक विश्लेषक जो अगस्टो डे कैस्त्रो नेवास ने कहा है कि "छोटे समय में UNASUR को संस्थागत रूप देना बेहद धीमी रफ्तार वाला होगा। इतना ज़रूर है कि भविष्य में ये आगामी योजनाओं पर वार्ता का एक महत्त्वपूर्ण मंच होगा।"

2008 में UNASUR के सदस्यों ने बोलिविया में मुख्यालय के साथ एक दक्षिण अमेरिकी संसद के गठन का प्रस्ताव रखा। लेकिन अभी तक UNASUR के सदस्य संसद को संगठन के ढांचे में एक संस्थागत रूप देने में नाकाम रहे हैं। प्रस्तावित संसद के लिए मुख्यालय भी नहीं बना है। फिर भी एक संगठन के रूप में UNASUR का उदय हुआ है, और विशेष मुद्दों को लेकर इसने समय-समय पर अलग-अलग परिषदों का गठन किया है। इन परिषदों को खंड स्तर और मंत्री स्तर के परिषदों के तहत रखा गया है:

1. दक्षिण अमेरिकी रक्षा परिषद (CDS) – सदस्य देशों ने इस परिषद का गठन दक्षिण अमेरिकी देशों की रक्षा नीतियों के लिए सलाहकार, सहयोग और समन्वय के संगठन के रूप में किया, जिसका मकसद है दक्षिण अमेरिका को एक शांति ज़ोन के रूप में स्थापित करना; रक्षा मामलों में दक्षिण अमेरिका को एक ऐसा संगठन बनाना जो उपक्षेत्रीय और राष्ट्रीय स्तर पर अपनी पहचान बनाए रख सके और लैटिन अमेरिकी और कैरीबियाई एकता को मजबूत कर सके; और जो रक्षा से जुड़े मामलों को मजबूत करने के लिए क्षेत्रीय सहयोग कर सके। इसका गठन सदस्य देशों के रक्षा मंत्रियों ने किया था। इस परिषद का आदर्श था "अहस्तक्षेप, स्वायत्तता और क्षेत्रीयता"। CDS की एक सालाना बैठक में ये तय किया गया कि CDS "ना तो सैनिक गठबंधन है और ना ही एक रक्षा संगठन" और ये सिर्फ सदस्य देशों के बीच वार्ता और सहयोग बढ़ाने का ज़रिया है।

2. दक्षिण अमेरिकी स्वास्थ्य परिषद (CSS) – दक्षिण अमेरिकी स्वास्थ्य परिषद में UNASUR देशों के स्वास्थ्य मंत्री शामिल हैं, जो संघ के सदस्य देशों के सलाहकार हैं। परिषद इस विषय पर आपसी सहमति की संस्था है, जिसका काम दक्षिण अमेरिका में स्वास्थ्य सुविधाओं को बढ़ाना, क्षेत्रीय सामंजस्य के मौजूदा क्रियाकलापों को अपने कार्यक्रम में शामिल करना और एक-दूसरे से सहयोग करना तथा सदस्य देशों के नागरिकों के लिए स्वास्थ्य से जुड़ी साझा नीतियां तैयार करना है।

3. UNASUR का निर्वाचन परिषद (CEU) – UNASUR के निर्वाचन परिषद के कामकाज में सलाह, सहयोग, समन्वय, अनुभवों के आदान-प्रदान, पर्यवेक्षण, निर्वाचन से जुड़े मामलों में मदद, नागरिकों की भागीदारी बढ़ाना और UNASUR के संवैधानिक संधियों के मुताबिक लोकतंत्र को मजबूत करना शामिल है। इस परिषद के आदर्शों में स्वायत्तता और लोगों के खुद फैसले लेने के अधिकार के सम्मान के अलावा एकजुटता, सहयोग, लोकतंत्र, नागरिकों की भागीदारी, शांति, पारदर्शिता, विविधता और वैश्विक मानवाधिकार की रक्षा शामिल हैं। निर्वाचन परिषद का सामान्य मकसद एकीकरण का माहौल तैयार करना, अनुभवों का आदान-प्रदान,

सहयोग, शोध और आम आदमी की भागीदारी सुनिश्चित करना और नागरिक शिक्षा तथा लोकतंत्र को बढ़ावा देना है। इनके अलावा इस परिषद के अन्य मकसद निम्नलिखित हैं:

- एकीकरण का माहौल बनाना, शोध, नागरिक भागीदारी, नागरिक शिक्षा, लोकतंत्र और अनुभवों का आदान-प्रदान करना
- विभिन्न खंडों और संगठनों के बीच ज्ञान और अनुभव के आदान-प्रदान को प्रोत्साहन देना। इसके अलावा निर्वाचन से जुड़े तकनीकि जानकारों की मदद मुहैया कराना।
- रचना को प्रोत्साहन, निर्वाचन व्यवस्था को मजबूत बनाने के लिए पुरानी तकनीकियों को नई, संशोधित और प्रगतिशील तकनीकियों से बदलना। इसके अलावा निर्वाचन के लिए योग्य व्यवस्था लागू करना शामिल हैं।
- किसी सदस्य देश के अनुरोध पर पर्यवेक्षण टीम के ज़रिये निर्वाचन प्रक्रिया में मदद करना। लेकिन साथ ही उस देश की स्वायत्तता, वहां के नियमों और सरकार को सम्मान देना।

4. दक्षिण अमेरिकी ऊर्जा परिषद (CES) – दक्षिण अमेरिकी ऊर्जा परिषद का मुख्य लक्ष्य है सदस्य देशों में ऊर्जा उत्पादन का ढांचागत विकास करना और दक्षिण अमेरिकी देशों में ऊर्जा के मामले में स्थायित्व को बढ़ावा देना।

5. दक्षिण अमेरिकी विज्ञान, तकनीकि और शोध परिषद (COSUCTI) – इस परिषद के आदर्श हैं - विज्ञान, तकनीकि और शोध को आर्थिक और सामाजिक विकास के दृष्टिकोण से आगे बढ़ाना; वैज्ञानिक और तकनीकि विकास सामाजिक समावेशन, समानता को बढ़ावा और विविधता को सम्मान के हिसाब से हो; वैज्ञानिक और तकनीकि ज्ञान सभी के लिए मुफ्त उपलब्ध हों; इस क्षेत्र की नीतियां वार्ता पर आधारित हों और व्यक्तिगत तथा दूसरों के ज्ञान को महत्ता देने के अनुरूप तैयार हों। UNASUR के आम बजट में तय किये गए मद के मुताबिक COSUCTI अपनी गतिविधियों को वित्तीय मदद देता है। इस मद में संगठन के सामान्य फंड के अलावा सदस्य देशों से दी गई स्वेच्छा राशि भी शामिल होती है।

6. दक्षिण अमेरिकी सांस्कृतिक परिषद (CSC) – इसका लक्ष्य दक्षिण अमेरिकी क्षेत्र में सांस्कृतिक सहयोग बढ़ाना है; विकास को आधार बनाकर गरीबी और असामनता को दूर करने के लिए संस्कृति को बढ़ावा देना; सम्पूर्ण प्रोत्साहन देने और संस्कृति की पहुंच आम लोगों तक पहुंचाने के लिए क्षेत्रीय और उप क्षेत्रीय असमानता को कम करने के कार्यक्रमों को बढ़ावा देना; और तमाम नीतियों में सांस्कृतिक अभिव्यक्ति का विकास और प्रोत्साहन शामिल हैं।

7. दक्षिण अमेरिकी सामाजिक विकास परिषद (CSDS) – CSDS के लक्ष्य हैं गरीबी और सामाजिक संवेदनशीलता का उन्मूलन, प्रकृति के प्रति समान समावेशन और दीर्घकालीन विकास, वैश्विक मानवाधिकार ढांचे में नागरिकों की भागीदारी, साहित्यिक, सांस्कृतिक और नस्लीय सम्मान, लिंग के आधार पर समानता और एकरूपता का विकास, जिसमें स्वायत्तता का सम्मान और दक्षिण अमेरिकी नागरिकता की पहचान शामिल हो।

8. दक्षिण अमेरिकी आर्थिक और वित्तीय परिषद (CSEF) – इसका मकसद है स्थानीय और क्षेत्रीय मुद्रा का अंतर-क्षेत्रीय व्यापार में इस्तेमाल; बहुपक्षीय अदायगी और कर्ज नीतियों की सामयिक समीक्षा; गारंटी के लिए क्षेत्रीय व्यवस्था का विकास, जो क्षेत्र में विभिन्न किस्म के क्षेत्रों को वित्तीय मदद पहुंचाए; सेन्ट्रल बैंकों का समन्वय मजबूत करना, अंतरराष्ट्रीय फंडों का प्रबंधन, विकास और आपसी सहयोग की मांगों के मुताबिक उपलब्ध वित्तीय फंडों का समन्वय; दक्षिण अमेरिकी वित्तीय और पूंजी बाज़ार को बढ़ावा देना; पूंजी की आवक पर सामूहिक निरीक्षण की व्यवस्था का विकास करना; अदायगी की परेशानी से निपटने के लिए आपसी समन्वय और मदद उपलब्ध कराना; अंतरराष्ट्रीय बाज़ार में उतार-चढ़ाव के असर से क्षेत्र को बचाने के लिए नीतियों का विकास; UNASUR के साथ वित्तीय समन्वय बढ़ाना; विशाल आर्थिक नीतियों में सहयोग की

योजनाओं को बढ़ावा देना; छोटे और मध्यम वर्गीय उत्पादन इकाईयों को बढ़ावा और स्थानीय विकास की योजनाएं शुरु करना; दूसरे क्षेत्रीय संघों से सहयोग के नए तरीकों की योजनाएं तैयार करना; और निरीक्षण, नियंत्रण और पारदर्शिता के लिए योग्य व्यवस्थाओं का चयन करना।

9. दक्षिण अमेरिकी शिक्षा परिषद (CSE) – शिक्षा परिषद का लक्ष्य क्षेत्रीय शिक्षा के स्तर पर आपसी सहयोग बढ़ाना, हर व्यक्ति के लिए शिक्षा का अधिकार सुनिश्चित करना, सभी स्तरों और सटीकता के आधार पर समान शिक्षा को बढ़ावा देने की योजनाएं लागू करना, और क्षेत्रीय तथा उप क्षेत्रीय स्तर पर शिक्षा में असमानता को दूर करना शामिल है।

10. दक्षिण अमेरिकी ढांचागत और योजनागत विकास परिषद (COSIPLAN) – ये परिषद सलाह, मूल्यांकन, सहयोग, योजना और कार्यक्रमों तथा योजनाओं के समन्वय के आधार पर राजनीतिक और सामरिक सहयोग में मंच मुहैया कराने के लिए जिम्मेदार है, ताकि UNASUR के सदस्य देशों के बीच एकीकृत क्षेत्रीय ढांचे को लागू करने में मदद मिले।

11. दक्षिण अमेरिका वैश्विक ड्रग समस्या परिषद (CSPMD) – ये परिषद UNASUR का स्थाई अंग है, जिसकी जिम्मेदारी वैश्विक ड्रग समस्या पर सलाह, सहयोग और समन्वय स्थापित करना है। इसका लक्ष्य नीतियां प्रस्तावित करना, सदस्य देशों के बीच योजना, सहयोग और समन्वय स्थापित करने की व्यवस्था तैयार करना है, ताकि सभी क्षेत्रों में इस गंभीर समस्या से लड़ा जा सके। इसके अलावा दक्षिण अमेरिका की पहचान वैश्विक ड्रग समस्या के विरोधी के रूप में स्थापित हो सके; और विभिन्न बहुदेशीय मंचों पर ड्रग्स के ख़िलाफ़ मुहिम चलाई जा सके।

12. दक्षिण अमेरिकी नागरिक सुरक्षा, न्याय और अंतरराष्ट्रीय संगठित अपराधों के ख़िलाफ़ सहयोग परिषद (DOT) – इस परिषद के गठन का उद्देश्य नागरिक सुरक्षा, न्याय और अंतरराष्ट्रीय अपराधों के ख़िलाफ़ आपसी समन्वय बढ़ाना, UNASUR के दूसरे विभागों के तहत आनेवाले मुद्दों के दोहरीकरण पर लगाम लगाना और "ऐसे कार्य ग्रुप तैयार करना है, जो UNASUR के सचिवालय की मदद से परिषद की योजनाओं को अमल में लाएं"।

दक्षिण अमेरिकी नेताओं ने 2009 में एक संधि पर हस्ताक्षर किये थे, जिसके मुताबिक बैंक ऑफ साउथ का गठन होना था। विकास कार्यों पर आधारित इस बैंक के गठन की वकालत वेनेज़ुएला के राष्ट्रपति ह्यूगो शेवाज़ ने की थी। प्रस्ताव के मुताबिक वेनेज़ुएला के काराकास में स्थित बैंक को UNASUR के सदस्य देशों को विकास कार्यों के लिए वित्तीय और आर्थिक मदद देना था। 2010 में एक त्रैमासिक अमेरिकाज़ के एक आलेख में रिपोर्ट आई कि अर्जेंटीना, ब्राज़ील और वेनेज़ुएला ने इस बैंक में 6 बिलियन डॉलर देने का निश्चय किया है, जिससे बैंक का कुल शुरुआती प्रस्तावित बजट 7 बिलियन डॉलर हो जाएगा। अप्रैल 2012 में अर्जेंटीना, बोलिविया, इक्वाडोर, उरुग्वे और वेनेज़ुएला ने एक बार फिर बैंक के गठन की बात दोहराई। जून 2012 में UNASUR के महासचिव ने बयान दिया कि बैंक क्षेत्रीय औद्योगीकरण और ढांचागत निर्माण योजनाओं में मदद देगा। लेकिन कुछ पर्यवेक्षकों ने बैंक के दीर्घकालीन वजूद पर सवाल खड़े किये। इस सिलसिले में बैंक के सीईओ और UNASUR के महासचिव और कोलम्बिया के पूर्व राष्ट्रपति अर्नेस्ट सैम्पर पिज़्ज़ानो के बीच अंतिम बैठक 28 जुलाई 2015 को हुई थी। बैठक का मुद्दा बैंक खोलने से पहले इसकी कार्य सीमाओं का चयन करना था। वेनेज़ुएला स्थित काराकास को बैंक के मुख्यालय के रूप में चुना गया है।

2010 में UNASUR ने सदस्य देशों में लोकतांत्रिक संस्थानों की सुरक्षा और उन्हें अधिक मजबूत बनाने के लिए मुख्य नियमावली में एक परिशिष्ट जोड़ा। इस परिशिष्ट के मुताबिक किसी भी UNASUR के सदस्य देश में "लोकतांत्रिक मूल्यों को तोड़ने या तोड़ने की आशंका" होने पर UNASUR के वरिष्ठ कमेटियों को

अधिकार होगा कि वो उस देश को "UNASUR की किसी भी गतिविधि में भाग लेने से निलंबित कर दें"। UNASUR ने कई मौकों पर लैटिन अमेरिकी देशों में अलोकतांत्रिक दिखनेवाले मौकों की आलोचना की है। मसलन, 2009 में होंडुरास में सत्तापलट और प्राग्वे में 2012 में राष्ट्रपति फर्नांडो लूगो को विवादास्पद रूप से अपदस्थ करना।

जून 2012 में UNASUR ने एक निर्वाचन परिषद का गठन किया, जिसमें हर सदस्य देश से चार प्रतिनिधि शामिल हुए। परिषद का काम था चुनावों से पहले उस देश का दौरा करना, उम्मीदवारों और दलों के साथ संवाद स्थापित करना और चुनावी प्रक्रिया पर नज़र रखना। अक्टूबर 2015 में UNASUR ने सूरीनाम और वेनेज़ुएला में चुनाव पर्यवेक्षण के लिए टीम भेजी। सूरीनाम पर अपनी रिपोर्ट में परिषद ने बताया कि उन्होंने करीब 80% चुनावी क्षेत्रों का दौरा किया और चुनाव में महिलाओं की ज़ोरदार भागीदारी देखी। वेनेज़ुएला चुनाव के बारे में परिषद की रिपोर्ट थी कि वहां शांति, अनुशासन और अच्छी भागीदारी के साथ चुनाव सम्पन्न हुए।

UNASUR कोलम्बिया और वेनेज़ुएला के बीच वार्ता शुरु कराने में भी सफल रहा। दोनों के बीच रिश्ते तनावपूर्ण हो गए थे, जब कोलम्बिया ने वेनेज़ुएला पर आरोप लगाया कि वो उन विद्रोहियों को समर्थन दे रहा है, जो कोलम्बिया सरकार के ख़िलाफ़ काम कर रहे हैं। फिर भी संगठन दोनों देशों के बीच बातचीत शुरु कराने में कामयाब रहा।

इस तरह अब तक UNASUR समस्याओं के राजनयिक समाधान को समर्थन देता रहा है। संगठन ने एंडियन सीमा विवाद में मध्यस्थता की, जो कोलम्बिया और उसके पड़ोसी देशों – इक्वाडोर और वेनेज़ुएला के बीच तनाव की वजह थी। 2008 में कोलम्बिया की सेना ने इक्वाडोर की सीमा के भीतर FARC कैम्प पर हमला किया था। इस तनाव के निपटारे के बारे में द न्यूयॉर्क टाइम्स ने लिखा, "सबसे बड़ी विजय इस क्षेत्र की दिखती है, जिसने अपने आपसी विवादों को बिना बाहरी मदद और हिंसा का सहारा लिये निपटा लिया"। संगठन की कोशिशों ने 2010 में कोलम्बिया और वेनेज़ुएला के बीच अर्से से बंद राजनयिक सम्बंधों को फिर से बहाल करने में मदद की। 2015 में वेनेज़ुएला के राष्ट्रपति निकोलस माडुरो और कोलम्बिया के राष्ट्रपति जुआन मैनुअल सैन्टोस ने सात सूत्री दस्तावेज़ पर हस्ताक्षर किये और सीमा विवाद को वार्ता के ज़रिये दूर करने पर तैयार हो गए। दोनों नेताओं ने फौरन आपसी राजनयिक रिश्ते बहाल किये; सीमा स्थिति की जांच को तैयार हुए; सीमावर्ती मुद्दों और ज़ोन में अमन बहाली पर बातचीत की; और अन्य मुद्दों के अलावा इक्वाडोर और उरुग्वे की पहल से वार्ता का सिलसिला जारी रखने को तैयार हुए। इसी तरह, शांतिपूर्ण सहअस्तित्व और सामाजिक-आर्थिक विकास के लिए वो सीमा की समस्या सुलझाने के लिए समझौता करने के लिए भी तैयार हुए। ख़ास बात थी कि ये मकसद अंतरराष्ट्रीय नियमों के मुताबिक और वार्ता के ज़रिये हासिल होनी है। इस मुकाम तक पहुंचने में UNASUR के सदस्य देशों की भूमिका को नकारा नहीं जा सकता।

UNASUR ने क्यूबा और अमेरिका के रिश्तों में गरमाहट का भी स्वागत किया। हाल में UNASUR महासचिव और कोलम्बिया के पूर्व राष्ट्रपति एरनेस्टो सैम्पर की क्यूबा यात्रा क्षेत्र में UNASUR के बढ़ते क्षेत्रीय समन्वय का प्रतीक है। UNASUR के सदस्यों ने मांग की है कि क्यूबा को फिर से OAS का सदस्य बनाया जाए और अमेरिका से कहा है कि ना सिर्फ क्यूबा पर लगाए आर्थिक प्रतिबंध ख़त्म किये जाएं, बल्कि लैटिन अमेरिका से सभी अमेरिकी ठिकाने भी हटाए जाएं। UNASUR महासचिव ने कहा है कि कैरिबियाई देशों की सुरक्षा सिर्फ क्यूबा की ही नहीं, बल्कि सभी दक्षिण अमेरिकी देशों की जिम्मेदारी है और हाल के दशकों में ये एकजुटता और मजबूत हुई है।

ये वक्तव्य UNASUR के लक्ष्यों के अनुरूप है, जिसने क्षेत्रीय स्थायित्व और शांति स्थापित की है, विभिन्न सहयोगों का सबक सीखा है और क्षमता बढ़ाने तथा तकनीकि स्थानांतरण को संभव बनाया है। 2011 में दक्षिण अमेरिकी सैनिक खर्च से जुड़ा एक रजिस्टर शुरु किया गया है। ये दक्षिण अमेरिकी सैन्य सेवाओं से जुड़ा एक अहम प्रयोग है और आपसी विश्वास बढ़ाने और सुरक्षा मुद्दों को बेहतर बनाने से जुड़ा है। UNASUR देशों ने हैती (MINUSTAH) में संयुक्त राष्ट्र स्थायित्व मिशन, अंतरराष्ट्रीय "सीमन बोलिवर" नागरिक सैनिक बचाव और सहयोग ब्रिगेड में भी भाग लिया।

UNASUR के सदस्यों ने अंतरराष्ट्रीय नियमों, वैश्विक संधियों और चार्टर के प्रति भी सम्मान जताया, जब उन्होंने दक्षिण अमेरिका को 2013 में ज़ोन ऑफ पीस बनाने की घोषणा का समर्थन किया। विवादों को निपटाने के लिए वो शांतिपूर्ण तरीकों का समर्थन करते हैं और सैन्य बल तथा किसी देश की सम्प्रभुता को चुनौती देने का विरोध करते हैं। घोषणापत्र में दक्षिण अमेरिका को बारूदी बमों से भी मुक्त क्षेत्र बनाने पर ज़ोर दिया गया और संगठन ने इसका भी समर्थन किया। संगठन के दक्षिण अमेरिकी रक्षा परिषद ने शांति, सुरक्षा और सहयोग को भी आपसी बातचीत के ज़रिये मजबूत बनाने का आह्वान किया है। ग्रुप ने सदस्य देशों के बीच विवादों को दूर करने में हमेशा मध्यस्थता की है, आपदा के वक्त मदद के लिए खड़ा हुआ है और सामूहिक रक्षा और विकास योजनाओं में सहयोग को बढ़ावा दिया है।

क्षेत्रीय संगठन के रूप में OAS की तुलना में UNASUR की अहमियत दो वजहों से बढ़ जाती है। पहला, दक्षिण अमेरिकी देशों ने UNASUR का गठन आपसी सम्मान को ध्यान में रखकर किया था। UNASUR का लक्ष्य है क्षेत्रीय स्तर पर देशों में ऐसा समन्वय स्थापित करना कि दक्षिण अमेरिका में तनाव कम हो और अमेरिका तथा दूसरे शक्तिशाली देशों की तुलना में मजबूत हो। UNASUR के ढांचे में वार्ता की महत्त्वपूर्ण जगह है और ये आपसी सहयोग के लिए तीव्रता के साथ अवसर प्रदान करता है। वर्णक्रम के अनुसार अध्यक्षों की नियुक्ति होती है, ताकि कोई व्यक्ति या देश दूसरों की तुलना में अधिक असरदार साबित होने की कोशिश ना करे। इसके अलावा सभी सदस्य देशों के विदेश मंत्री कार्य योजनाओं और उनपर अमल के लिए साल में दो बार बैठक करते हैं। UNASUR के एजेंडे में शामिल कुछ मुद्दों में क्षेत्रीय सुरक्षा, सामाजिक विकास, विज्ञान और तकनीकि, वित्त, शिक्षा का विकास और ड्रग्स की तस्करी से लड़ना है। OAS की तुलना में UNASUR के अधिक प्रभावी होने की दूसरी वजह है कि OAS में ताकतवर अमेरिका का शामिल होना। लिहाजा इस संगठन की नीतियां और कार्यक्रम दरअसल अमेरिका की नीतियां और कार्यक्रम होते हैं, बजाय लैटिन अमेरिकी देशों के हितों के। लैटिन अमेरिकी देशों में ही मतैक्य ना रखनेवाले और अमेरिका का विरोध करने वाले देश OAS को वैचारिक रूप से स्वीकार नहीं कर पा रहे थे। इस स्थिति में गुवाना, कोलम्बिया, बोलिविया और चिली जैसे देशों ने एक ऐसा संगठन खड़ा किया, जो समानता का समर्थक है और विवाद की हालत में भी सदस्य देशों के बीच सहयोग को बढ़ावा देता रहा है।

हालांकि UNASUR वार्ता के लिए प्रभावकारी मंच साबित हुआ है और सदस्य देशों के बीच कई राजनयिक विवादों के शांतिपूर्वक समाधान में मददगार साबित हुआ है, फिर भी यूरोप की तर्ज पर देश से अधिक ताकतवर संगठन बनाने में इसे कामयाबी हासिल नहीं हुई है। अमेरिकन सोसाइटी एंड काउंसिल ऑफ अमेरिकाज़ (AS/COA) में योजना के वरिष्ठ निदेशक क्रिस्टोफर सबातिनी का कहना है कि "जब तक UNASUR बहुपक्षीय संगठन बना रहेगा तब तक ये कोई कानूनी, नियामक या संस्थागत ढांचा खड़ा करने में असमर्थ रहेगा। बिना इन राजनयिक ज़रूरतों के UNASUR सिर्फ सम्मेलनों की श्रृंखलाओं और उच्च मानसिकता वाले ऐसे घोषणापत्रों का संगठन बनकर रह जाएगा, जिनपर ज़मीनी हकीकत को ध्यान में रखते हुए अमल करना असंभव होगा"। अंदरूनी वैचारिक मतभेद आगे बढ़ने की दिशा में रुकावट पैदा कर सकते हैं। यूरेशिया ग्रुप के कैस्त्रो नेवास ने इंगित किया कि इससे क्षेत्र में मुक्त अर्थव्यवस्था के बीच बढ़ते विभाजन और संरक्षणवाद को बढ़ावा मिलेगा।

इसके अलावा सहयोग करने की ग्रुप की क्षमता ब्राजील की अर्थव्यवस्था के आकार से भी प्रभावित हुई है, जिसकी UNASUR के कुल खर्च में 60% की हिस्सेदारी है। विश्व बैंक के आंकड़ों के मुताबिक लैटिन अमेरिकी बाज़ार में ब्राज़ील सबसे मजबूत है और उसपर UNASUR के व्यापारिक समझौतों का सबसे कम असर है। 2011 में ब्राज़ील का निर्यात GDP के 12% से भी कम था और दक्षिण अमेरिका के स्पैनिश बोलनेवाले देशों के औसत के आधे से भी कम था।

हालांकि UNASUR की संवैधानिक संधि पर आधारित लक्ष्यों को देखते हुए इसकी क्षमताओं को लेकर किसी भी नतीजे तक पहुंचना जल्दबाज़ी होगी। UNASUR का गठन यूरोपीय संघ के आधार पर हुआ है। UNASUR का आदर्श एक राष्ट्र से ऊपर उठकर दूसरे क्षेत्रीय संगठनों से बेहतर ग्रुप बनाना है और इस दिशा में वार्ताओं के आधार पर कदम बढ़ाते हुए अभी शुरुआती दौर में है। इस संगठन की वजह से OAS की क्षेत्रीय राजनीतिक मंच की पदवी छिन गई है। UNASUR के परिषदों में दक्षिण अमेरिकी आर्थिक परिषद का गठन आर्थिक समन्वय करने और वैश्विक आर्थिक संकट से लड़ने के लिए किया गया था और ये परिषद भी मजबूत हो रहा है।

यहां ध्यान देनेवाली बात है कि हालांकि UNASUR संगठन को अमेरिका के प्रभाव से दूर रखने में कामयाब रहा है, लेकिन ये उन सदस्य देशों के विकास रफ्तार पर रोक लगाने में भी नाकाम रहा है, जिनके अमेरिका के साथ द्विपक्षीय समझौते हैं। दक्षिण अमेरिकी देशों को महाद्वीप के आधार पर FTAA (Free Trade Agreement of the Americas) के तहत लाने की कोशिश में नाकाम रहने के बाद अमेरिका ने क्षेत्र के अलग-अलग देशों से द्विपक्षीय FTA संधि करने का फैसला किया। इस फैसले के आधार पर अमेरिका ने चिली के साथ 2004 में, पेरू के साथ 2009 में और कोलम्बिया के साथ 2012 में FTA के आधार पर संधि की। अमेरिका के बहुउद्देश्यीय व्यापार समझौते – The Trans-Pacific Partnership – में पेरू और चिली शामिल हैं। ख़ासकर सीमा सुरक्षा और ड्रग्स तस्करी को रोकने के लिए अमेरिका के कोलम्बिया के साथ करीबी रिश्ते मशहूर हैं। इस बीच पूर्व से भी दबाव पड़ रहा है और चीन लैटिन अमेरिकी देशों के साथ FTA के आधार पर द्विपक्षीय व्यापारिक समझौते करने की कोशिश कर रहा है। चीन के साथ सबसे पहले 2006 में चिली ने संधि की। इसके बाद 2010 में पेरू के साथ FTA पर दस्तखत हुए और अब कोलम्बिया के साथ संधि की बातचीत चल रही है। इसके अलावा यूरोपीय संघ ने भी कोलम्बिया और पेरू के साथ 2011 में FTA पर दस्तखत किये जो 2013 से लागू हुए।

UNASUR पर असर डालने वाले दक्षिण अमेरिका में वर्तमान बदलाव

क्षेत्रीय स्तर पर सहयोग ज़रूरी है, लेकिन क्षेत्र के ताकतों की असमानताओं को समझने के लिए क्षेत्रीय सहयोग पर असर डालनेवाले घरेलू राजनीतिक मुद्दे भी अहम हैं। 2012 में जब राष्ट्रपति दिलमा रोउसेफ सत्ता पर काबिज हुए, उस वक्त ब्राज़ील को उभरता हुआ वैश्विक ताकत माना जा रहा था। एशिया में करीब एक दशक तक इसके उत्पादों की भारी खपत से देश को भारी फायदा हुआ था। इसी आर्थिक विकास की बदौलत 2008 में ब्राज़ील फौरन वैश्विक आर्थिक मंदी से उबर गया और विदेशी निवेश के लिए आकर्षक केन्द्र बन गया। लेकिन लैटिन अमेरिका में करीब एक दशक तक मजबूत आर्थिक और राजनीतिक ताकत जब उतार पर है तो इसके लक्ष्यों पर सवाल उठ रहे हैं। कमजोर निर्यात ढांचे की वजह से ब्राज़ील के निर्यातकों की मांग कम हो रही है। इसकी मुद्रा के भी कम कीमत होने और गैर-उत्पाद पर आधारित निर्यात में प्रतिस्पर्धा बढ़ने का नकारात्मक असर पड़ा है। वैश्विक स्तर पर देखा जाए तो एक दशक में दो महत्त्वपूर्ण वैश्विक व्यापार संगठन – द ट्रांस पैसिफिक पार्टनरशिप (TPP) और द ट्रांस-अटलांटिक ट्रेड एंड इन्वेस्टमेंट पार्टनरशिप (TTIP) बिना ब्राज़ील के शामिल हुए आगे बढ़ रहे हैं। TPP 12 देशों की व्यापार संधि है, जिसमें अमेरिका, मेक्सिको, चिली और पेरू शामिल हैं। इसका मकसद एक व्यापारिक संघ बनाकर सदस्य देशों के बीच कर कम करना और विदेशी व्यापार को बढ़ाना है। आबादी के लिहाज से इस ग्रुप का असर करीब 800 मिलियन लोगों पर है, जो यूरोपीय संघ का दोगुना है और ये

विश्व के करीब 40 % व्यापार पर कब्जा कर सकता है। हालांकि आलोचकों का कहना है कि इससे मजदूरों को लेकर सदस्य देशों के बीच प्रतिस्पर्धा बढ़ सकती है। उनका ये भी कहना है कि इस संधि का इस्तेमाल कर कम्पनियां सदस्य देशों की सरकारों पर बिना मतदाताओं को संज्ञान में लिये बड़े बदलाव के लिए दबाव डाल सकती हैं। इस संधि को चीन के बढ़ते असर को कम करने के लिए हथियार के तौर पर देखा जा सकता है। TTIP अमेरिका और यूरोपीय संघ के बीच व्यापार संधि है, जिसका मकसद कर कम कर बेहतर आपसी व्यापारिक सहयोग स्थापित करना है।

मरकोसुर के तहत कभी क्षेत्रीय समन्वय स्थापित करने में ब्राज़ील की प्रमुखता थी। लेकिन अब इसका झुकाव दक्षिण अमेरिका की दो नाज़ुक अर्थव्यवस्थाओं – अर्जेंटीना और वेनेज़ुएला – की ओर है। अपनी विविधता के कारण UNASUR ने ब्राज़ील को ग्रुप के भीतर और क्षेत्र के दूसरे संगठनों के साथ भी कार्य करने की छूट दे दी है। इससे ब्राज़ील को क्षेत्रीय स्तर पर अपने घरेलू मुद्दों को साधने में मदद मिली है। मसलन, जब राष्ट्रपति रूसेफ पर भ्रष्टाचार के आरोपों ने उनकी सरकार से भारी संख्या में समर्थन कम कर दिया था।

अर्जेंटीना में 2015 में हुए चुनावों ने मौरिसियो मैक्री राष्ट्रपति चुने गए और करीब 12 साल तक चले "किर्चनेरिज़्मो" का अंत हुआ। ये एक राजनीतिक आंदोलन था, जिसका नाम राष्ट्रपति क्रिस्टीना किर्चनर और उनके दिवंगत पति नेस्टर किर्चनर के नाम पर रखा गया था। आंदोलन में कई प्रमुख मुद्दों को उछाला गया था। मसलन, देश की बिगड़ती आर्थिक व्यवस्था; सामाजिक और कृषि नीति; और अर्जेंटीना में सुरक्षा और अपराध का सबसे गंभीर मुद्दा। अर्जेंटीना कर्ज चुकता करने में असमर्थ रहा और देश में मुद्रा स्फीती 25% तक बनी रही। अंतरराष्ट्रीय मुद्रा कोष के वर्ल्ड इकोनॉमिक आउटलुक रिपोर्ट (2015) के मुताबिक अर्जेंटीना की जीडीपी में 2017 तक कोई बदलाव नहीं आएगा, 2015 और 2016 में विकास दर सिर्फ 0.1% रहेगी। मुद्रा नियामक लागू करना, अंतरराष्ट्रीय बाज़ार से वित्तीय मदद हासिल करने में नाकामी, निजी सम्पत्तियां जब्त करना, पेंशन योजनाओं का राष्ट्रीयकरण, राष्ट्रीय एयरलाइन, मुख्य तेल कम्पनी YPF और पूंजी लगानेवालों की पूंजी वापस करने में नाकामी ने देश को इस कदर अलग-थलग कर दिया है, जितना पहले कभी नहीं हुआ था। कम्पनियां बाज़ार को शक की निगाहों से देख रही हैं, क्योंकि उनपर अपना फायदा देश से बाहर भेजने पर रोक लगी है।

वेनेज़ुएला में चुनाव नतीजों ने साफ कर दिया कि एक दशक से भी अधिक समय तक देश की राजनीति में प्रमुखता से बने रहनेवाला वाम आंदोलन भ्रष्टाचार के आरोपों, आर्थिक बदलाव की बयार और मतदाताओं की निराशा का शिकार होकर अपनी पैठ खो चुका है। 17 सालों के भीतर हुए 20वें चुनाव में विपक्षी गठबंधन Mesa de la Unidad Democrática (MUD) ने भारी बहुमत से जीत हासिल कर ली। MUD की जीत 1999 के बाद राष्ट्रीय असेम्बली में विपक्षी दलों की पहली जीत है। इससे पहले राष्ट्रपति निकोलस मादुरो की सरकार पर भ्रष्टाचार और भाई-भतीजावाद के आरोप लगे थे। वेनेज़ुएला के आर्थिक विकास की रफ्तार धीमी हुई थी और मादुरो सरकार हालात पर काबू पाने में असमर्थ साबित हुई थी। वेनेज़ुएला में जुलाई 2015 में मुद्रा स्फीति की दर 64% थी, जो तेल की कीमत गिरने के बाद और बढ़ गई, और साल के अंत तक 68% तक पहुंच गई। वेनेज़ुएला की अर्थव्यवस्था लगातार गिरती जा रही है और IMF की रिपोर्ट के मुताबिक वेनेज़ुएला की जीडीपी 2015 में 10% गिर गई। IMF का अनुमान है कि 2016 में ये गिरावट 6% की दर से जारी रहेगी। तेल की कीमत में गिरावट हालात को और चिन्ताजनक बना रही है। अब हालत ये है कि वेनेज़ुएला दीर्घकालीन स्थायित्व वाले खाद्य पदार्थ और आम उपभोक्ता की वस्तुएं इकट्ठा कर रहा है, जिससे आम आदमी में भी रोष बढ़ गया है। देश में सामाजिक तनाव बढ़ रहा है और अपराधों की संख्या भी बढ़ती जा रही है। (2015 में स्थानीय माफिया के हाथों कुल 27,875 हत्याएं हुईं) इन्हें भी राजनीतिक बदलाव की वजह के रूप में देखा जा रहा है।

वाम दल पेरू में भी खतरे में दिख रहे हैं, जो दुनिया का नम्बर एक कोकीन उत्पादक देश है, जहां 2015 के मध्य सत्र चुनाव में जीते 115 उम्मीदवारों पर देश की नशा निरोधी पुलिस की जांच चल रही है। कुल मिलाकर लैटिन अमेरिका में 'नव वाम लहर' पर अब खतरा मंडरा रहा है। वैश्विक आर्थिक मंदी और ऊर्जा कीमतों में गिरावट जैसे मुद्दों ने सरकार को अपनी समाजवादी नीतियों पर फिर से सोचने पर मजबूर कर दिया है, क्योंकि ये नीतियां उस वक्त लागू की गई थीं, जब आर्थिक समृद्धि और ज़रूरत से ज़्यादा उत्पादन का दौर था।

क्षेत्र की राजनीति की भविष्यवाणी पूरी सटीकता के साथ करना आसान नहीं। मुमकिन है कि अगले चुनावों में वाम दल फिर से सत्ता में लौट आएं। जो भी हो, लेफ्ट हो, राइट हो या सेन्ट्रलिस्ट – जो भी पार्टी हो, ज़रूरी ये है कि आर्थिक रुकावटों को दूर करने के लिए साथ विकास कार्य किये जाएं। कुछ महत्त्वपूर्ण देशों की राजनीतिक स्थिति बदलने से क्षेत्रीय संगठनों के कामकाज पर असर पड़ सकता है। नई सरकारें अमेरिका के अलावा यूरोपीय संघ, कनाडा, मेक्सिको आदि देशों के साथ भी संधि करने को उत्सुक हो सकती हैं। UNASUR अमेरिका को अपने संगठन से अलग-थलग रखकर उसका प्रभाव करने की कोशिश जारी रख सकता है, लेकिन स्वास्थ्य, शिक्षा जैसे अविवादित मुद्दों पर सदस्य देशों का अमेरिका के साथ सहयोग रोकने में भी असमर्थ है।

निष्कर्ष: भारत और UNASUR

हाल के सालों में लैटिन अमेरिकी कैरिबियाई देशों की ओर भारत की दिलचस्पी बढ़ी है। इस क्षेत्र में प्राकृतिक संसाधनों की भरमार है, जो खाद्य सुरक्षा और ऊर्जा सुरक्षा में सहयोग कर सकती है। दोनों ही भारत की महत्त्वपूर्ण ज़रूरतों में शामिल हैं।

इस क्षेत्र में टाटा, बजाज, ओएनजीसी विदेश, एस्सार, रिलायंस इत्यादि बड़ी कम्पनियां पहले से ही व्यापार में भागीदारी कर रही हैं। जहां तक चौहद्दी का सवाल है तो लैटिन अमेरिका भारत से करीब पांच गुणा बड़ा है, जिसके एक ओर प्रशांत महासागर और दूसरी ओर अटलांटिक महासागर स्थित है। दोनों के बीच पनामा कनाल एक महत्त्वपूर्ण कड़ी है। यहां हाइड्रोकार्बन्स के अलावा ज़रूरी लवणों, जैसे, लौह खनिज, ताम्बा, सोना, निकेल इत्यादि की भरमार है।

इस क्षेत्र में दुनिया के कुछ सबसे बड़ी ताजा पानी के भंडार भी मौजूद हैं और आमेज़न तो पूरी दुनिया में बेजोड़ है।

UNASUR इस क्षेत्र के अधिकतर इलाकों का प्रतिनिधित्व करता है। वैसे भी उसका राजनीतिक मकसद दक्षिण अमेरिका की पहचान संयुक्त राष्ट्र और अमेरिका से अलग बनाने का है। दूसरी ओर संगठन में शामिल दक्षिण अमेरिका के अधिकतर देशों में प्रचुर मात्रा में प्राकृतिक संसाधन पाए जाते हैं। UNASUR के सदस्य देशों को लैटिन अमेरिका के दूसरे देशों की तुलना में राजनीतिक रूप से अधिक स्थिर और आर्थिक रूप से मजबूत माना जा सकता है।

संयुक्त रूप से UNASUR की आबादी करीब 400 मिलियन है और इसका सालाना कारोबार $4 ट्रिलियन अमेरिका डॉलर है। लिहाजा आर्थिक रूप से UNASUR भारत के लिए बेहद लाभदायक मौके मुहैया करा सकता है।

भारत की विदेश नीति पहले से ही LAC (लैटिन अमेरिका और कैरिबियन) पर केन्द्रित है। LAC क्षेत्र के साथ रिश्ते मजबूत करने के लिए भारत ने क्षेत्र के साथ सामाजिक-आर्थिक मुद्दों पर संधि की है। LAC पर केन्द्रित कार्यक्रमों में भारत ने मेरकासुर और चिली के साथ तरजीह देनेवाली व्यापार संधियां की हैं।

भारत ने ब्राज़ील, अर्जेंटीना, वेनेज़ुएला, मेक्सिको, त्रिनिदाद और गुयाना के साथ व्यापार कमीशन सम्बंध बनाकर सामाजिक-सांस्कृतिक सहयोग बढ़ाने की भी कोशिश की है।

ध्यान देनेवाली बात है कि भारत की अधिकतर संधियां द्विपक्षीय संधियां हैं, जबकि UNASUR पूरे दक्षिण अमेरिका को एक बैंक, सदस्य देशों के बीच वीजा मुक्त व्यापार और एक करेंसी के आधार पर जोड़ने में जुटा है। इस परिप्रेक्ष्य में UNASUR भारत को आर्थिक और राजनीतिक सहयोग के बेहतर अवसर मुहैया करा सकता है।

ब्राज़ील UNASUR की सबसे बड़ी अर्थव्यवस्था वाला देश है। इसके अलावा ब्रिक्स और IBSA का सदस्य होने की वजह से UNASUR में उसका प्रभुत्व है। भारत के साथ ब्राज़ील के पहले से ही ख़ास रिश्ते हैं, जिनका इस्तेमाल UNASUR के साथ जोड़ने में किया जा सकता है। वेनेज़ुएला में दुनिया के विशालतम तेल भंडारों में एक है और वो भी UNASUR का हिस्सा है। उधर सत्ता परिवर्तन के बाद अर्जेंटीना भी दुनिया के अन्य देशों के साथ नए रिश्ते जोड़ने को उत्सुक है। वो भारत को अनाज निर्यात करनेवाले प्रमुख देशों में से एक हो सकता है। अर्जेंटीना चीन को पहले से ही सबसे अधिक सोयाबीन निर्यात कर रहा है।

दूसरी महत्त्वपूर्ण बात ये भी है कि UNASUR के सदस्य देश भी भारत के साथ नए रिश्ते बनाने को उत्सुक हैं। उनका मानना है कि भारत चीन की तुलना में बेहतर व्यापारिक दोस्त साबित हो सकता है, जिसका फिलहाल इस क्षेत्र में वर्चस्व है। मानवाधिकार हनन के आरोपों से भारत मुक्त रहा है और यहां लोकतंत्र की मजबूत कड़ी है। ये दोनों कारण भी UNASUR के सदस्य देशों के लिए वैचारिक रूप से सकारात्मक हैं। अगर चीन और भारत अपनी व्यापारिक नीतियां स्पष्ट रखते हैं तो चीन की आक्रामक व्यापार नीति को देखते हुए भी भारत स्वागत योग्य है। उपर्युक्त कारकों को देखते हुए भारत को UNASUR के सदस्यों से सहयोग के मौकों का इस्तेमाल करना चाहिए और अपनी नीतियों को बेहतर आयाम देने के लिए UNASUR के साथ बेहतर समन्वय स्थापित करना चाहिए।

**डॉ. स्तुति बनर्जी द इंडियन काउंसिल ऑफ वर्ल्ड अफेयर्स, नई दिल्ली में शोधकर्ता और सुश्री अपराजिता पांडेय रिसर्च इंटर्न हैं।*